राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून के संदर्भ में*

क्या है भोजन का अधिकार?

भोजन के अधिकार का मतलब है पोषण युक्त भोजन की आज की जरूरत को सामान के साथ पूरा करना, कल के लिए सुरक्षित मात्र होना, उत्पादन की व्यवस्था पर समाज का निर्णय प्राथमिक होना, स्थानीय खाद्य व्यवस्था, संस्कृति और जरूरत के मान से बाज़ार का गठन, समाज के वंचित तबकों की सामाजिक सुरक्षा सुनिश्चित होना.

मानवीय जीवन में प्रवेश (गर्भावस्था से शुरू करके) करने से लेकर जीवन की अंतिम अवस्था तक जीवित बने रहने के लिए शरीर को निर्धारित मात्रा में पोषक तत्वों की जरूरत होती है. इन पोषक तत्वों की कमी से व्यक्ति का शारीरिक और मानसिक विकास गहरे तक प्रभावित होता है. स्वास्थ्य विज्ञान के मुताबिक किसी भी व्यक्ति के विकास का आधार २ वर्ष के उम्र तक पहुँचते - पंहुचते बन जाता है और उस उम्र में कोई पोषण की कमी का शिकार हो जाए तो जीवन भर उस कमी की कारण पैदा हुई स्थिति से पूरी मुक्ति संभव नहीं होती है. इसके परिणाम स्वरुप बच्चे स्कूल में तेज़ गति से सीख नहीं पाते हैं, खेल नहीं पाते हैं, रचनात्मक नहीं हो पाते हैं, और वयस्क होने पर आजीविका या श्रम के मामले में भी पिछड़ते जाते हैं, इससे कई तरह की विकलांगता भी पैदा होती है. छोटे बच्चों को हर रोज़ कम से कम 1250 केलोरी 6 वर्ष के बच्चों को 1650 केलोरी, साधारण श्रम करने वालों को 2400 केलोरी और ज्यादा शारीरिक श्रम करने वालों को 3800 केलोरी उर्जा की जरूरत होती है. यह उर्जा भोजन से मिलना चाहिए. पौष्टिक मापदंडों के मुताबिक हमें प्रोटीन, वसा, कार्बोहायड्रेट , केल्शियम, मिनेरल, कई तरह के विटामिन, और सूक्ष्म पोषक तत्व जीवन के लिए जरूरी होते हैं.

प्रख्यात अर्थशास्त्री उत्सा पटनाइक के मुताबिक मौजूदा समय में भारत की 76 फ़ीसदी जनसँख्या को इन मापदंडों के अनुसार भोजन नहीं मिलता है. जब भोजन के अधिकार की बात की जाती है तब भोजन के उत्पादन, उसके सामान वितरण, भेदभाव से मुक्ति, आजीविका के साधनों की सुरक्षा और उनकी गरिमा शामिल है. यह जानना महत्वपूर्ण है कि हर समुदाय की एक खाद्यान संस्कृति होती है, इस संस्कृति का भी सम्मान होना चाहिए. पिछले 40 वर्षो के विकास ने भारत में जिस तरह कृषि और अनाज उत्पादन के तौर-तरीकों की आघात पंहुचाया है, उससे भोजन के अधिकार का हनन बहुत बढा है. देश में भूख के साथ जीवन बिताने वालों की संख्या अब 80 करोड़ तक पंहुच गई है, ऐसे में भूखमरी के विस्तार को थामने और उसमे कमी लाने में राज्य की भूमिका सुनिश्चित करने की बात की जा रही है. सीधा सा मतलब यह है राज्य को नीतिगत, कानूनी और संवेधानिक कदम उठा कर यह सुनिश्चित करना होगा कि कोई भूखा ना सोये, उनके आजीविका से साधनों की कानूनन रक्षा करना, यही भोजन का अधिकार है.

---

* यह दस्तावेज विकास संवाद द्वारा तैयार किया गया है. यदि आप कोई सहयोग चाहें तो संपर्क कर सकते हैं - vikassamvad@gmail.com / 0755 4252789

तेज आर्थिक विकास और यहां तक कि परिवार के स्तर पर पर्याप्त मात्रा में खाद्यान्न उपलब्ध होने भर से स्थाई और संतोषजनक पोषण स्तर सुनिष्चित नहीं किया जा सकता। इन नीति (विकास की नीति) के कुछ दूरगामी प्रभाव भले हों लेकिन फिलहाल कुपोषण के चक्रव्यूह में फंसी आबादी को कोई राहत मिलती नहीं दीखती। इस वंचित वर्ग के पास जीने के लिये बहुत कम आयु है पर कम उम्र में मर जाने के लिए बहुत कुछ है।

राष्ट्रीय पोषण नीति, 1993

भूतकाल में लोकतंत्र को राजनीतिक लोकतंत्र के रूप में पहचाना गया, जिसमें मोटे तौर पर एक व्यक्ति का एक मत होता है। किन्तु मत का उस व्यक्ति के लिये कोई मतलब नहीं होता जो निर्धन और निर्बल है या जो भूखा है और भूख से मर रहा है।

पंडित जवाहरलाल नेहरू, 25 फरवरी 1956

जो गरीब लोग इधर-उधर भटक रहे हैं, जिनके पास कोई काम नहीं है, जिन्हें कोई मजदूरी नहीं मिलती और जो भूख से मर रहे हैं, जो निरन्तर कचोटने वाली गरीबी के शिकार हैं, वे संविधान या उसकी विधि पर गर्व नहीं कर सकते।

उपराष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन्

अब केवल भूख से नहीं
अन्याय से मुक्ति के लिये हो रोटी का कानून

भुखमरी आज के समाज की एक सच्चाई है परन्तु मध्यप्रदेष के सहरिया आदिवासियों के लिये यह सच्चाई एक मिथक से पैदा हुई, जिन्दगी का अंग बनी और आज भी उनके साथ-साथ चलती है भूख। आर.वी. रसल और हीलाराल बताते हैं कि जब दुनिया की शुरूआत हो रही थी तब महादेव ने इंसानों को खेती करना सिखाना चाहा। इसके लिये उन्होंने एक हल बनाया और अपने नंदी बैल को जोतकर धरती पर ले आये। यहां आकर उन्होंने देखा कि चारों ओर तो जंगल हैं तब उन्होंने एक इंसान की रचना की जिसे "सवर" कहा गया। महादेव ने "सवर" को जंगल साफ करने के लिये कुल्हाड़ी दी और नंदी को वहीं छोड़कर दूसरा बैल लेने चले गये। सवर को जंगल साफ करने के बाद बहुत भूख लगी पर वहां खाने के लिये कुछ न था, तो सवर ने नंदी को मारकर खा लिया। फिर जब महादेव वापस आये तो जंगल को साफ देखकर बहुत खुश हुये और इनाम में जंगल से मिलने वाले भोजन, कंदमूल, औषधियों, फलों और जड़ों के बारे में संसाधन ज्ञान दिया। पर जब उन्हें नंदी नही दिखा तो उन्होंने उसे खोजा। महादेव को उसका कंकाल मिला और अमृत छिड़ककर उन्होंने नंदी को जीवित कर दिया। नंदी ने सारी घटना उन्हें कह सुनाई जिसे सुनकर महादेव क्रोधित हुये और सवर (जो बाद में सहरिया हुये) को श्राप दिया कि तुम संसाधनों के पास तो रहोगे पर गरीबी से मुक्त नहीं होओगे; तुम्हे कभी भर पेट भोजन नहीं मिलेगा और भूखे ही जिन्दगी बिताओगे।

यह कहानी कितनी सच है यह तो पता नहीं किन्तु सामाजिक बहिष्कार और राज्य की नीतियों का श्राप जरूर सहरिया आदिवासी भोग रहे हैं। यह एक पिछड़ी हुई जनजाति के रूप में परिभाषित हैं जो पोषण और स्वास्थ्य की असुरक्षा के कारण संकट में हैं। आज भारत के कुल 623 आदिवासी समूहों में से 75 जनजातियों को पिछड़ी जनजाति की श्रेणी में रखा गया है।

बिहार में मुसहर रहते हैं। यह शब्द स्पष्ट करता है कि इनका "मूसक' यानी चूहों के साथ कोई न कोई संबंध है। जी हां, आज भी मुसहर चूहों को खाकर ही जिंदा रहते हैं, वे चूहों के बिलों तक जाते हैं और उनके द्वारा इकट्ठा किये गये अनाज के दाने लाकर अपने लिये खाना बनाते हैं।

उड़ीसा और झारखण्ड के कई इलाकों में लोग गाय और भैंस का गोबर इकट्ठा करके लाते हैं ताकि उसमें से ज्वार, और गेहूं के उन दानों को खोज सकें जो जानवर के पेट से बिना पचे गोबर के साथ बाहर आ जाते हैं। उन्हें धोकर-खाकर लोगों ने अपनी भूख को मिटाने की नाकाम कोशिश की।

आज भी भारत में 92 लाख शुष्क शौचालय के मानवमल ढोने का काम एक समुदाय विशेष सौंपा गया। यह एक जाति आधारित काम बन गया। आज भी तीन लाख से ज्यादा अति दलित लोग मानव मल ढोने की असहनीय पीड़ा को भोगते हैं क्योंकि उनके पास गरीबी और भूख से जूझने का कोई और साधन नहीं है।

जबलपुर जिले के मझगंवा गांव के गणेश बर्मन को यह नहीं पता चला कि पांच साल पहले क्यों उसका नाम गरीबी की रेखा की सूची से हटा दिया गया। शायद यह सरकार की उस नीति का परिणाम था जिसके तहत सरकार गरीबी

की विभीषिका को कम करने के लिये गरीबों की संख्या को घटा रही थी। उनकी एक एकड़ भरेल जमीन 7 हजार रूपये के एवज में 6 साल से गिरवी पड़ी है। दो हजार बीड़ी बनाने के एवज में उन्हें एक माह बाद ठेकेदार से 50 रूपये मिले। अक्सर भूखे सोना एक आदत सी बन गई थी। अब तो उन्हे उधार भी नहीं मिलता था। उनका 26 साल का बेटा संतू मानसिक बीमारी का षिकार है और बेटी सुनीता भूखे रहते-रहते 12 दिसम्बर 2009 को जिन्दगी की जंग हार गई। सरकार की योजनाओं से वे बाहर हो गये क्योंकि गरीबी की रेखा की रस्सी उनके गले में फांसी का फंदा बनकर अटक गई।

भारत में सात प्रतिषत जनसंख्या किसी न किसी विकलांगता से ग्रसित है, जिन्हें सामाजिक और पारिवारिक स्तर पर बहिष्कार का सामना करना पड़ता है। उन्हें पोषण की सुरक्षा की जरूरत है परन्तु विडम्बना यह है कि इस वर्ग को कोई संरक्षण नहीं है। इसी तरह महिलाओं, बच्चों, दलितों को भी अलग-अलग स्तर पर खाद्य सुरक्षा के कानूनी हक की दरकार है। इस मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने बार-बार वंचित तबकों के लिये संरक्षण की बात कही। न्यायालय ने खाद्य सुरक्षा को जीवन और समानता के मौलिक अधिकार के साथ जोड़कर परिभाषित करते हुये कहा - "अदालत की चिंता यह है कि गरीब लोग, दरिद्रजन और समाज के कमजोर वर्ग भूख और भुखमरी से पीड़ित न हों। इसे रोकना सरकार का एक प्रमुख दायित्व है। इसे सुनिष्चित करना नीति का विषय है जिसे सरकार पर छोड़ दिया जाये तो बेहतर है। अदालत को बस इससे संतुष्ट हो जाना चाहिये और इसे सुनिश्चित भी करना पड़ सकता है कि जो अन्न भण्डारों में खासकर भारतीय खाद्य निगम के गोदामों में भरा पड़ा है, वह समुद्र में डुबोकर या चूहों द्वारा खाया जाकर बर्बाद न किया जाये।"

न्यायालय ने कहा कि "भुखमरी की षिकार दरिद्र महिलाओं और पुरूषों, गर्भवती महिलाओं और दूध पिलाने वाली माताओं तथा दरिद्र बच्चों, खासकर उन मामलों में, जिनमें वे या उनके परिवार के सदस्य उन्हें पर्याप्त भोजन उपलब्ध कराने की स्थिति में न हों, को भोजन उपलब्ध करवाना सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है।" सरकार को न्याय के इस मंतव्य का सम्मान करना चाहिये।

गरीबी की रेखा की सूची ही राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून में पात्रता का आधार बनेगी। यह वही गरीबी की रेखा है जिसे 6.52 करोड़ परिवार पकड़ पाये है पर 7.5 करोड़ परिवार इस सूची से बाहर कर दिये गये हैं। पहले योजना आयोग ने दावा किया था कि 28.3 प्रतिशत परिवार गरीब हैं पर बाद में उन्हीं के द्वारा स्थापित तेंडुलकर समिति ने बताया कि भारत में 37.5 प्रतिशत और गांवों में 41.8 प्रतिशत गरीब है। भारत सरकार ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा स्थापित डॉ. एन.सी. सक्सेना समिति ने सिध्द किया कि 50 प्रतिशत ग्रामीण गरीब हैं। 76.8 प्रतिषत को पूरा पोषण नहीं मिलता है और 77 प्रतिशत लोग 20 रूपये प्रतिदिन से कम में गुजारा करते हैं। पर सरकार केवल 28 प्रतिशत को ही गरीब मान रही है और उन्हें ही इस कानून का सीमित लाभ देने पर अड़ी हुई है।

इसी दौर में यह बात खुलकर सामने आ गई कि गरीबी की रेखा मापदण्ड वंचितों के भोजन के अधिकार के लिए एक बड़ी चुनौती है। सरकार ने खर्च के जिन मापदण्डों (गांवों में 12 रूपये प्रतिदिन और शहरों में 19 रूपये प्रतिदिन प्रति व्यक्ति से कम खर्च करने वालों को गरीब माना जा रहा है) को गरीबी की रेखा का आधार बनाया है उससे भरपेट भोजन भी मिलना संभव नहीं है यह राशि हमारी थाली में जरूरत का एक तिहाई से भी कम भोजन लाती है। अर्जुन सेन गुप्ता और उत्सा पटनायक के आंकलन साफ बताते हैं कि 80 से 84 करोड़ लोगों को नियमित रूप से सस्ते अनाज, दाल और तेल का अधिकार अब बेहद जरूरी हो गया है। भारत में हर दो में एक बच्चा कुपोषण और महिला खून की कमी की शिकार है। उन्हें सम्मानजनक जीवन का अधिकार तब तक संभव नहीं है जब तक कि उनकी खाद्य सुरक्षा सुनिष्चित नहीं हो जायेगी। विसंगतिपूर्ण गरीबी की रेखा की परिभाष और पहचान के तरीकों के

कारण दो तिहाई लोग भूखे सोने को मजबूर हो रहे हैं। जब सरकार यह कहती है कि वह (विसंगतिपूर्ण और बहुत छोटी) गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले परिवारों को ही 25 किलो सस्ता राषन देगी तो हमें 'सवर के महादेव' इस सरकार में नजर आते हैं क्योंकि सरकार गरीबी और भूख के साथ जीने वालों की थाली को आधा ही भर रही है। इसमें भी दालें, खाद्य तेल और दूसरे मोटे-पोषक अनाज शामिल नहीं हैं। ऐसे में पेट की थैली में कुछ पड़ तो जायेगा पर उनकी पोषण सम्बन्धी जरूरत पूरी न हो पायेगी। इसलिये जरूरी है कि गेहूं ओर चावल की सूची में ज्वार, बाजरा, मक्का, रागी को शामिल करते हुये पात्रता को 60 किलो तक बढ़ाया जाये। इसके साथ ही सस्ती दर पर दाल और तेल का अधिकार भी तय हो।

आज राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून बनाने की पहल थोड़ा जोर पकड़ रही है। इस कानून की कवायद ऐसे दौर में की जा रही है जब भारत दुनिया की सबसे तेज गति से प्रगति करने वाली अर्थव्यवस्था (वास्तव में रोजगार विहीन और सामाजिक असुरक्षा पैदा करने वाली प्रगति) मानी जाती है। इसी देष में दुनिया के सबसे ज्यादा कुपोषित बच्चे भी रहते हैं। यहां 360 अरबपति हैं परन्तु यहां की 93 प्रतिशत कार्यषील जनसंख्या असंगठित क्षेत्र मे है। अनाज की कीमतें खूब बढ़ रही है, उत्पादन की दषा और दिषा बदल रही है। सराकर का संरक्षण किसानों, महिलाओं, विकलांगों से हट रहा है। भूख हमारे विकास के दावों को बार-बार सच का आईना दिखाती है पर सरकार उस सच से बार-बार मुंह फेर लेती है।

कहां है आधी आबादी की खाद्य सुरक्षा

पोषण की कमी, भेदभाव, भांति-भांति की हिंसा और शोषण के कारण भारत में 427 लाख महिलाओं का अस्तित्व खत्म हो गया है। नैसर्गिक रूप से महिलाओं और पुरूर्षों की संख्या बराबर-बराबर होना चाहिये परन्तु भारत की कुल जनसंख्या में से महज 48.२ प्रतिशत ही महिलायें हैं। इस देश में एक लाख जीवित जन्म पर 301 महिलाओं की प्रसव से जुड़े कारणों से मृत्यु हो जाती है, यह दुनिया की सबसे खराब स्थिति वाले देषों में शुमार है। इस मान से लगभग 70 हजार मातृत्व मौतें हर साल भारत में होती हैं और इन मौतों का बड़ा कारण खून की कमी है और क्योंकि उन्हें पोषण की आपूर्ति ही नहीं हो पाती है। राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण् के मुताबिक केवल 39.8 फीसदी महिलाओं को ही दूध या दही हर रोज सीमित मात्रा में मिलता है। 47.3 प्रतिशत महिलाओं को दाल या चने कभी-कभार मिलते हैं। यहा 55.3 प्रतिशत महिलायें खून की कमी की षिकार हैं और 35.6 प्रतिशत पोषण की कमी की स्थिति में हैं।

कुछ मामलों में हमारी स्थिति मोरक्को, मलावी, चाड, इरीट्रिया से भी खराब है, जैसे जन्म के समय बच्चों का कम वजन होना। भारत में 28 फीसदी बच्चों का वजन जन्म के समय कम होता है। पिछले डेढ़ दषकों से भारत में राष्ट्रीय मातृत्व सुरक्षा योजना इसी मकसद से चलाई जाती रही कि प्रसव के 4 से 12 सप्ताह पहले महिलाओं को एक निष्चित राशि सरकार उपलब्ध करवाये, जिससे वे पोषण सम्बन्धी अपनी जरूरत को पूरा कर सकें; परन्तु जननी सुरक्षा योजना के लागू होने के साथ (जिसमें अस्पताल में प्रसव कराने पर बच्चे के जन्म के बाद आर्थिक मदद मिलती है) ही इस योजना पर लापरवाही का पलीता लगा दिया गया। जब जरूरत है तब सरकार मदद नहीं देती है अब। ऐसे में राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून के तहत महिलाओं की खाद्य सुरक्षा के अधिकार शामिल होने पर ही उनके साथ न्याय होगा।

एकल और विधवा महिलायें

भारत जैसे विकासशील देशों में 60 से 80 प्रतिशत खाद्यान्न उत्पादन महिलाओं के हाथों से होता है। पर पारम्परिक और सांस्कृतिक संदर्भों में महिलाओं के लिये सबसे बाद में, सबसे कम और कभी-कभी नहीं ही खाने का सिध्दान्त बना हुआ है। सत्ता और संसाधन महिलाओं के साथ भेदभाव की मूल जड़ है, जिसमें पितृ सत्तात्मक सोच आधार का काम करती है। ऐसे में उन महिलाओं की स्थिति की कल्पना कीजिये जो अकेली हैं, विधवा हैं या जिनका तलाक हो चुका है। ऐसी महिलायें यौन आक्रमण की षिकार होती हैं और उन्हें दबाव डालकर मौन रहने के लिये मजबूर किया जाता है। उनके लिये कोई संरक्षण नहीं है। 1999 के उड़ीसा चक्रवात, 2001 के गुजरात भूकंप, 2002 के गुजरात के साम्प्रदायिक दंगों के बाद ऐसी महिलाओं के यौन उत्पीड़न के हजारों मामले सामने आये। महिलाओं के इस वर्ग को समाज तो दूर परिवार में ही संरक्षण नहीं मिलता है। यह वर्ग कोई छोटा सा समूह नहीं है। 2001 की जनगणना के मुताबिक भारत में 6.9 प्रतिषत तलाकशुदा या परित्यक्ता हैं। इसके साथ ही 30 साल से ज्यादा उम्र की 1.4 प्रतिषत महिलायें अविवाहित हैं, जिन्हें भी एकल की श्रेणी में माना जा सकता है। इस तरह 7.5 प्रतिशत भारतीय महिलायें अकेली हैं और यह संख्या है चार करोड़ यानी कनाडा की जनसंख्या से ज्यादा। इनमें से 2 करोड़ महिलायें 60 वर्ष से ज्यादा उम्र की हैं और हमारे पारम्परिक से मौजूदा सामाजिक ढांचें की यात्रा का अनुभव बताता है कि ये महिलायें हर क्षण सामाजिक बहिष्कार का सामना करती हैं इनकी खाद्य सुरक्षा का सवाल उतना ही बड़ा है जितना की जीवन का सवाल! एक स्तर पर खाद्य सुरक्षा का अधिकार महिलाओं के इस वर्ग को सम्मान का अधिकार दिला सकता है।

शहरी झुग्गी बस्तियों का समाज

शहरी झुग्गी बस्तियों और उनमें रहने वाले लोगों को एक सुनियोजित तरीके से समाज के ऊपर एक दाग के रूप में स्थापित करने की कोशिश हुई। यह कहा जाता रहा है कि वे अपराधी हैं; वे अनैतिक व्यापार करते हैं, मैले-कुचैले और गंदे हैं। यदि विकास करना है तो हमें उन्हें शहर से बाहर करना होगा। पर यह एक बुना गया झूठ है। एक कल्पना कीजिये कि यदि इन झुग्गी बस्तियों के लोग एक हफ्ते के लिये हड़ताल पर चले जायें तो तुम्हारी जिन्दगी क्या होगी? क्या तुम्हारे बच्चों के स्कूल का वाहन आयेगा, क्या घर के काम होंगे, क्या सब्जी मिलेगी, क्या शहर की सफाई होगी? नहीं !! जनाब तुम्हारी जिन्दगी का पहिया है ये झुग्गी वाशिंदे। इनकी जिन्दगी को खत्म करने की नहीं अपने बराबर लाने की बात करो। भारत के 640 शहरों में 420 लाख लोग घोषित झुग्गी बस्तियों में रहते हैं और इनकी जिन्दगी का सबसे बड़ा सच है आधा खाली पेट। यहां 52 हजार झुग्गी बस्तियां हैं पर इनमें से केवल आधी को ही वैधानिक माना जाता है। चौंकाने वाली बात यह है कि तथा कथित अवैधानिक बस्तियों में 17 करोड़ बच्चे रहते हैं और अस्वच्छता के साथ भूख को जीते हैं। इन्हें न तो स्थाई पता मिलता है न पहचान। न पानी पीने को न बिजली और सफाई।

आय बहुत कम होने के कारण ये पोषणयुक्त भोजन पर ज्यादा खर्च नहीं कर पाते हैं। सर्वोच्च न्यायालय के आयुक्तों की आठवीं रिपोर्ट (पृष्ठ 62) के मुताबिक भारत में 46 प्रतिशत बच्चे कुपोषित हैं किन्तु शहरी झुग्गी बस्तियों में 70 प्रतिशत बच्चे भूख के साथ जीते हुये कुपोषण के शिकार हो चुके हैं। शहरों का यह समाज

केवल 9.55 किलोग्राम खाद्यान्न का हर माह उपभोग करता है। बस्तियों में 2970 आंगनबाड़ी केन्द्र खोलने की जरूरत है पर वैधानिक-अवैधानिक बस्तियों की बहस के बीच बच्चों को पोषण का अधिकार ही नहीं मिल पा रहा है। बस्ती के लोग अस्वस्थ्यकर वाली ऐसी परिस्थितियों में काम करते हैं जो कई बीमारियों का कारण बनती है और लगातार चलने वाली भुखमरी उन्हें उन बीमारियों से लड़ने की ताकत हासिल नहीं करने देती। इन बस्तियों में जीवन जीना हर दिन की एक चुनौती है पर फिर भी इन्हें खाद्य सुरक्षा का अधिकार देने में इतनी हिचक क्यों? क्या हम अपने ही समाज में एक नया भेदभाव पैदा नहीं कर रहे हैं?

गरीबी के माथे रोटी के कानून का तिलक

क्या आप यह मानने के लिये तैयार हैं कि जनता की चुनी हुई कोई सरकार अपनी ही जनता को भूख और शोषण का शिकार बनाने के लिये कोई मसौदा तैयार कर सकती है? अगर नहीं तो कांग्रेस सरकार के मंत्रियों के सशक्त समूह द्वारा राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा क़ानून का जो मसौदा मंत्रिमंडल को विचार और आगे की कार्यवाही के लिए भेजा गया है, उसका एक बार अवलोकन कर लें। इस मसौदे को पढ़ते हुए साफ समझा जा सकता है कि राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा क़ानून का मसौदा अगर इसी रुप में स्वीकार कर लिया गया तो आने वाले दिनों में देश में भुखमरी, कुपोषण और असमानता अपने चरम स्तर पर पहुँचती नज़र आएगी। अपने आप को प्रगतिशील कहने वाली केंद्र की गठबंधन सरकार ने एक ऐसे राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून को लागू करने का कदम उठाया है जिसके तहत गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले हर परिवार को 3 रूपये प्रति किलो की दर से 25 किलो खाद्यान्न दिया जायेगा। बढ़ती हुई कीमतों, सूखे, गहराई तक जाती भुखमरी (इसमें से ज्यादातर संकट पूर्व-वर्तमान की सरकारों द्वारा अपनाई आर्थिक नीतियों के कारण पैदा हुये हैं) के संदर्भ में इस तरह का सीमित कानून निरर्थक और बेमानी है।

इस कानून की कवायद ऐसे दौर में की जा रही है जब भारत दुनिया की सबसे तेज गति से प्रगति करने वाली अर्थव्यवस्था (वास्तव में रोज़गारविहीन प्रगति) में से एक मानी जाती है, परंतु इसी देश में दुनिया के सबसे ज्यादा कुपोषित बच्चे भी रहते हैं। भारत में आज 360 अरबपति रहते हैं परंतु यहीं की 93 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या असंगठित क्षेत्र में है, जिन्हें रोजगार की कोई सुरक्षा प्राप्त नहीं है। रोज़गार का काननों होने पर भी मजदूर को यहां दिनभर की मेहनत के एवज में काम करने के कई दिनों बाद 30-40 रूपये की मजदूरी मिलती है। अनाज की कीमतें अनियंत्रित गति से बढ़ रही हैं, पोषणयुक्त भोजन आज ज्यादातर लोगों की पहुंच से बाहर है और सरकार के वित्त मंत्री, कृषि मंत्री और फिर प्रधानमंत्री बहुराष्ट्रीय कम्पनिओं के मंचो पर जा कर यह बयान देते हुए गर्व महसूस करते हैं कि महंगाई कम करना या उस पर लगाम लगाना सरकार के बस में नहीं है। वे भूल जाते हैं कि यह गर्व करने कि नहीं बल्कि शर्म करने की स्थिति है। सरकार के गोदामों में एक बार फिर जरूरत से दो गुना ज्यादा अनाज भरा हुआ था, फिर भी अनाज के खुले व्यापारिओं को भूख से आर्थिक फायदा कमाने की छूट दी जा रही थी। देश की सबसे ज्यादा जनसंख्या यानी 64 प्रतिशत लोगों को खेती से रोजगार मिलता है, फिर भी कृषि क्षेत्र गंभीर संकट के दौर से गुजर रहा है। प्रति व्यक्ति अनाज की उपलब्धता कम होती जा रही है और किसान या तो आत्महत्या करने के लिये मजबूर हैं या फिर खेती छोड़ रहे हैं। ऐसे में सूखे ने परिस्थितियों को और भी गंभीर बना दिया है। जिस वायदे को आज सत्ता में बैठे राजनेतिक दलों ने लोकसभा चुनावों के दौरान बार-बार उठाया उस वायदे के साथ अब वे ही खुल हर दुराचार हर रहे है। बात यहीं तक सीमित नहीं है, वे गरीबी, वंचितपन और संविधान का भी खुल कर मखौल उड़ा रहे है।

आज भूख़ और कुपोषण जीवन के मौलिक अधिकार का हर स्तर पर बार बार हनन कर रहे हैं, पर सरकार खाद्य और पोषण की सुरक्षा को बुनियादी अधिकार मानने को तैयार नहीं है। इसीलिए उसने यह तय कर लिया है कि प्रस्तावित राष्ट्रीय खाद्य सुरख्सा क़ानून के तहत केवल एक तिहाई परिवारों को ही थोडा बहुत अनंज दिया जाएगा। उसने अधिकारों को 25 किलो राशन तक ही सीमित रखा है। इस बात को पूरी तरह से नज़र अंदाज़ किया गया है कि 5 सदस्यों वाले एक परिवार को हर माह कम से कम 70 किलो अनाज और दाल की जरूरत होती है। बढ़ती महंगाई और आजीविका के संकट के साथ-साथ लोग जिस तरह से कुपोषण की जाल में फंसे हुए हैं, उसमे हर परिवार की प्रस्तावित पात्रता को दो गुना करने की जरूरत है।

इस नए क़ानून में गरीबी की रेखा को पात्रता का आधार बनाया जा रहा है। हम सब यह जान चुके हैं कि गरीबी की रेखा मौजूदा समय का सबसे बड़ा राज्य प्रवर्तित घोटाला और धोखा है। अपने दामन की दागों को छुपाने के लिए सरकारों ने आंकड़ों में हेर-फेर करके संख्या में गरीबी खूब कम की, परन्तु पिछले 10 वर्षों में यह सच बार बार सामने आया है कि सरकार गरीबी में घोटाला कर रही है। अर्जुन सेनगुप्ता ने असंघथित क्षेत्रों के लोगों पर तैयार अपनी रिपोर्ट में बता दिया कि 77 प्रतिशत लोग 20 रूपए से कम पर जीवन गुजार नहीं रहे हैं बल्कि जीवन की औपचारिकताये पूरी कर रहे है। क्या इतने लोग गरीबी से बाहर माने जायेंगे? फिर उत्सा पटनायक ने बताया कि सरकार ही कहती है कि जीने के लिए गाँव में 2400 केलोरी और शहर में 2100 केलोरी उर्जा का भोजन चाहिये, परन्तु 76 प्रतिशत लोगों को इतना, यानी भरपेट और पोषणयुक्त भोजन नहीं मिलता है। क्या यह 84 करोड़ लोगे गरीब नहीं माने जायेंगे? फिर राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (तीन) ने बताया कि 1998-99 से 2005-06 के बीच बच्चों के कुपोषण में केवल 1 फ़ीसदी की कमी हुई और अब भी 46 प्रतिशत बच्चे भूखे और कमज़ोर हैं जिन्हें पोषण के अधिकार ही दरकार है, पर भारत की सरकार ने इन 10 सालों में गरीबी में 10 प्रतिशत की कमी दिखाने का चमत्कार कर दिया। और वह मानती है कि केवल 28.3 प्रतिशत लोग यानी लगभग 31 करोड़ लोग यानि 6.5 करोड़ परिवार ही गरीबी की रेखा के नीचे हैं। वास्तव में ये वह लोग हैं जो भुखमरी की रेखा के नीचे हैं, ना कि गरीबी के रेखा के नीचे।

सर्वोच्च न्यायालय के हस्तक्षेप और सार्वजनिक बहसों के बाद ग्रामीण विकास मंत्रालय ने डा एन सी सक्सेना समिति को गरीबी के आंकलन का काम सौंपा, जिन्होंने कहा कि किन्हीं भी स्थितियों में देश की 50 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या को गरीब मानना होगा। उनकी अनुशंसा है कि भोजन और पोषण के मामले में बी पी एल जैसे सूचक लागू न करते हुए सबको खाद्य सुरक्षा का अधिकार दिया जाना जरूरी है। इसी दौरान योजना आयोग, जिसने संख्या के खूब चमत्कार दिखा कर भुखमरी को चरम पर पहुंचाया है, ने सुरेश तेंदुलकर की समिति बनायी, जिसने 42 प्रतिशत ग्रामीण लोगों को गरीब माना। इन अध्ययनों से यह तो साबित हो ही गया कि गरीबी में रहने के बावजूद तकरीबन 14 से 23 करोड़ लोगों को भारत की सरकार गरीबी की पहचान से वंचित करने का गैर- संवैधानिक काम करती रही है। बहुत हद तक जब यह माना जाता है कि वर्तमान परिद्रश्य में खाद्य असुरक्षा का संकट गहरा रह है, महंगाई, उत्पादन की प्राथमिकताओं में बदलाव, बाज़ार के बढ़ते दखल, भोजन तक पहुँच में कमी, और भ्रष्टाचार के कारण भूख़ ने बरगद

वृध्दावस्था की पीड़ा

उस नीतिगत अंधेपन का इलाज किया जाना चाहिये जो समाज में ज्यादा उम्र के लोगों की परिस्थितियों को गरीबी के सूचकों से बाहर निकाल फैंकते हैं। विकास की जिस परिभाषा को हम लागू कर रहे है। उसमें उन वर्गों और लोगों को न तो सम्मान है न हीं स्थान, जो खुद श्रम करके आर्थिक गतिविधियों में सक्रिय भूमिका नहीं निभाते है। ऐसे वृध्दजन सामाजिक बहिष्कार से जूझते हैं और भूख के साथ जीने को मजबूर हैं। वृध्दावस्था में केवल उम्र की पीड़ा का कारण नहीं है। जब कोई वृध्द महिला होती है तो पीड़ा दोहरी हो जाती है, विकलांगता की स्थिति में चौगुनी और दलित होने की स्थिति में कई-कई गुना बढ़ती जाती है। जो भूमिहीन और आश्रय विहीन हैं उन्हें तो मानों जीने का हक ही नहीं दिया गया है। इस वर्ग के सामने स्वास्थ्य और पोषण की जरूरतों की पूर्ति बड़ी जरूरत होती है। वर्ष 2001 की जनगणना के मुताबिक 60 वर्ष से ज्यादा उम्र के लोगों की संख्या 7.7 करोड़ थी जो अगले 50 वर्षों में बढ़कर 30 करोड़ हो जायेगी। चूंकि भारत में महिलाओं की औसत उम्र ज्यादा है इसलिये इनमें ज्यादातर महिलायें होंगी। इन लोगों को "भार" माना जाने लगा है, ऐसे में सामाजिक मानसिकता में बदलाव के साथ-साथ राज्य की भूमिका इनके संरक्षण के मामले में ज्यादा बढ़ जाती है। एक अध्ययन के मुताबिक हर 1000 की कार्यशील जनसंख्या को 141 व्यक्तियों को शारीरिक, मानसिक और संरक्षण देना होता है। भारत में अभी 12750358 वृध्दों को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय वृध्दावस्था पेंशन योजना का लाभ मिल रहा है जबकि शेष 85 लाख अभी इससे वंचित हैं। इस योजना के फायदे को कानूनी अधिकार का रूप देने की जरूरत है।

का रूप ले लिया है, जिसकी जड़ें केवल जमीन में ही नहीं हैं, बल्कि उसके शरीर से भी फूट-फूट कर निकल रही हैं और जीवन के हर हिस्से को जकड रही हैं। ऐसे में जिस खाद्य सुरक्षा की बात सरकार कर रही है, उसमें सुरक्षा कम, और व्यापार से राजनीति ज्यादा नज़र आती है।

सरकार ने यह नहीं सोचा कि घरेलू जरूरतों को पूरा करने के लिये खाद्यान्न और अनाज के आयात-निर्यात के बजाये घरेलू अनाज के उत्पादन और उपभोग को नीतिगत प्राथमिकता दी जाये। किसानों को संरक्षण दिया जाए और कंपनियों को अनुचित रियायतों से अनाज आयात करके देश में अनाज की "अव्यवस्था" न पैदा की जाये। पिछले 5 सालों में देश की जरूरतों को नज़रंदाज़ करके 40 लाख तन अनाज पहले निर्यात किया गया और जब यहाँ भूख पसरने लगी तो दोगुने दामों पर वही अनाज दूसरे देशों और कंपनियों से आयात कर लिया। यह कैसी शासन व्यवस्था है? आज भी सरकारी खरीदी के नाम पर देश के 6 राज्यों से 75 फ़ीसदी अनाज खरीदा जाता है, जिससे दूसरे राज्यों के अनाज उत्पादन के प्रति किसानों में अनमनापन पैदा किया गया और उन्हें किसानी छोड़ने के लिए मजबूर किया गया। अभी भी सरकार यह कहने को तैयार नहीं है कि वह अनाज उत्पादन को प्राथमिकता देगी, और सभी राज्यों से जहां भी संभव हो विकेंद्रीकृत खरीदी करेगी ताकि किसान का भी संरक्षण हो। केंद्र सरकार यह जरूर कहती रहती है कि खेती को विकास की धारा में लाने के लिए जतन किये जायेंगे, पर खाद्य सुरक्षा क़ानून बनाते समय वह इस वायदे को पूरा भूल जाते हैं हैं और अपने नज़रिए में इस क़ानून और खेती के विकास के परस्पर संबंधों को कहीं भी नहीं लाते हैं। जबकि सच यह है कि यदि ईमानदारी और अधिकारमूलक नज़रिए से इस क़ानून को बनाया और लागू किया गया तो इससे किसानों को संरक्षण मिलेगा, अनाज उत्पादन बढेगा, दाम स्थिर रहेंगे, और रोज़गार के अवसर सुरक्षित रहेंगे।

विकलांगता

मौजूदा योजनायें आश्रयविहीनों, स्कूलों के बाहर के बच्चों और विकलांगों के खाद्य सुरक्षा हितों की अनदेखी करती है। इनमें विकलांग व्यक्तियों के लिये संकट बहुत गहरा है। भारत में 7285117 विकलांग व्यक्ति गरीबी की रेखा के नीचे हैं परन्तु इनमें से महज 2684152 यानी केवल 37 फीसदी को ही विकलांगता पेंशन योजना का लाभ मिल रहा है। निष्चित रूप से राज्य के संरक्षण से यह वर्ग बड़े पैमाने पर छुटा हुआ है।

जो विधेयक मंत्रियों के सशक्त समूह ने तैयार किया है उसमे वृध्दों, एकल महिलाओं, विकलांगों जैसे वंचित तबकों को यूहीं हवा में उड़ा दिया है, यह कह कर यदि ठीक लगे तो इन तबकों के लिए चल रही योजनाओं को २५ किलो अनाज से जोड़ा जा सकता है। ऐसा लगता है कि इस कानून के द्वारा वृध्दों, विकलांगों, एकल महिला-बच्चों पर निर्भर परिवारों, निराश्रितों, बंधुआें मजदूरों, पिछड़ी हुई आदिम जनजाति, विमुक्त जाति-जनजाति, शहरी आश्रयहीन और संरक्षणविहीन बच्चों को विषेष संरक्षण दिए जाने की कोई जरूरत ही महसूस नहीं की गई, जबकि इन वर्गों से संबंधित हर व्यक्ति एवं परिवार को अंत्योदय कार्ड और अन्य जनसंख्या की अपेक्षा सार्वजनिक वितरण प्रणाली से आधी कीमत पर अनाज मिलना चाहिये। मंत्रियों ने यह भी साफ़ कर दिया है कि संस्थागत ढाँचे में चल रही योजनाओं जैसे मध्याह्न भोजन और आंगनवाडी कार्यक्रम तो इसमें शामिल नहीं ही किये जायेंगे। यानी जिस देश में आधे बच्चे कुपोषण के शिकार हों वहाँ की सरकार को यह कहने में शर्म भी नहीं आती कि पोषण बच्चों का कानूनी अधिकार नहीं बनेगा।

हम यह देखते रहे हैं कि उदारीकरण के बाद से जब भी जन अधिकारों और संसाधनों पर जन नियंत्रण की बात आती है तब सरकार का लाचारी से भरपूर तर्क यही होता है कि इतना धन या संसाधन हमारे पास कहाँ हैं? परन्तु इसके विपरीत लोगों से इकठ्ठा होने वाले करों और योगदान से यही सरकार को जब कम्पनियों और पूंजीपतियों को फायदा पहुंचाने में कोई हिचक नहीं होती है। केवल बीते साल में ही अमीरों के 4,18,096 करोड़ रूपये के कर माफ कर

दिये गये जबकि हर साल 1 लाख करोड़ रूपये की टैक्स चोरी होती है। इनकी तुलना में सरकार नरेगा के लिये केवल 39,000 करोड़ और सस्ते अनाज के लिये केवल 43,000 करोड़ रूपये आवंटित करती है। कई लाख करोड़ रूपये स्विस बैंक में पड़े हुये हैं; जबकि कई करोड़ रूपये राष्ट्रमण्डल खेलों जैसी बनावटी और गैर-जरूरी योजनाओं में डाले जा रहे हैं और गरीबों के पेट खाली हैं।

यह उल्लेखनीय है कि भारत में 46 फ़ीसदी बच्चे कुपोषण की गिरफ्त में हैं और यह दर सब-सहारा अफ्रीका से दो गुना ज्यादा है। इतना ही नहीं, यह भी शर्मनाक स्थिति है कि भारत में मातृत्व मृत्यु दर बहुत ऊँची है, जिसका एक बढ़ा कारण महिलाओं में कुपोषण की स्थिति है। ऐसे में सार्वजनिक वितरण प्रणाली का लोक व्यापीकरण किये बिना कोई और कदम इस स्थिति में बदलाव नहीं ला सकता है।

देश के हर वयस्क रहवासी को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत 2 रूपए प्रति किलो की दर से 14 किलोग्राम अनाज, जिसमें ज्वार, बाजरा, जोंधरी सरीखा पोषक अनाज भी शामिल हों, 20 रूपए प्रति किलो की दर से डेढ़ किलो दाल और 35 रूपए प्रति किलो की दर से खाने के तेल की पात्रता हो। बच्चों के सन्दर्भ में यह सुनिश्चित हो कि उन्हें कम से कम आधी मात्रा का अधिकार हो। राशन कार्ड परिवार की महिला मुखिया के नाम पर बनाया जाए। 25 किलो अनाज का प्रावधान असल में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सुनिश्चित किये गए मौजूदा 35 किलो ग्राम अनाज प्रति परिवार के अधिकार से भी कम है। यह एक ऐसा कानून होगा, जो अधिकार देने का वायदा करके वास्तव में मौजूदा अधिकारों को ही सीमित करता है।

जिस दौर में देश की जीडीपी सबसे तेज़ गति से बढ़ कर 8 और 9 प्रतिशत हुई है, उसी दौर में देश ने भुखमरी के शिकार लोगों की संख्या में सबसे तेज़ बढ़ोतरी देखी है। बाढ़, सूखा, तूफानों और जलवायु परिवर्तन के कारण पैदा हुई परिस्थितियों ने भुखमरी को बढ़ाया है, इस बात को नज़रंदाज़ किया जाना लोकतंत्र का अपमान है। सरकार के मंत्रियों द्वारा बार-बार यह कहा जाना कि हम मंहगाई को कम नहीं कर सकते हैं, उनके अपराधी होने का प्रमाण है।

आश्चर्यजनक ये है कि सरकार केवल अनाज के वितरण की ही बात कर रही है, वितरण के लिए अनाज पैदा करने, किसानों के संरक्षण, कंपनियों द्वारा खेती की जमीन, जंगल और पानी के दुरुपयोग को रोकने के कोई संकेत सरकार नहीं दे रही है। इसका मतलब यह है कि जल्द ही अनाज आयात करने की तैयारी हो रही है, ताकि बहुराष्ट्रीय कंपनियों को फायदा पंहुचाया जा सके। कोशिश यह भी है कि खाद्य सुरक्षा कानून के तहत अनाज के बजाये नकद राशि का भुगतान हितग्राहियों को कर दिया जाए, ताकि सरकार को खुद अनाज ना खरीदना पड़े और सब्सिडी पर होने वाला खर्च बच जाए। ऐसे में क्या यह कहना गलत होगा कि सरकार भूख, भुखमरी और शोषण को बढ़ाने की तैयार कर रही है? इस एक वाक्य को तथ्य के बजाये एक सवाल के रुप में पढ़ने की जरुरत है, जिसके लिये फिलहाल न सरकार तैयार है और न दूसरे राजनीतिक दल।

भुखमरी का चेहरा

स्वतंत्रता के बाद भारत का पहला बजट 200 करोड़ रूपये का था। जुलाई 2009 में जब भारत के वित्तमंत्री ने बताया था कि अब बजट बहुत बदल गया है। 60 वर्षों में भारत के बजट का आकार 200 करोड़ से 5000 गुना बढ़कर वर्ष 2009 में 10 लाख करोड़ रूपये पर पहुंच गया, पर अफसोस यदि कुछ नहीं बदला, तो नहीं कम हुआ गरीबी और भुखमरी का दर्द। हम गर्व से आज यह नहीं कह सकते हैं कि भारत के आर्थिक विकास ने भारत के लोगों को भूखी रातों से मुक्ति दिला दी है। यहां आज भी हर रोज 36 करोड़ लोग पेट भरे बिना नींद के आगोष में जाते हैं।

सवाल यह है कि भारत का बजट जब 5000 गुना बढ़ता है, तब अनाज उत्पादन केवल चार गुना ही बढ़ पाता है।

ग्रामीण भारत में 23 करोड़ लोग अल्पपोषण के जाल में हैं और भारत में 50 फीसदी बच्चों की मृत्यु का कारण कुपोषण है। 15 से 49 वर्ष की आयु वर्ग में हर 3 में से एक व्यक्ति कमजोर है, जिनका बॉडी मास इंडेक्स 18.5 से कम है।

आज भारत में सरकार लगभग 22.8 करोड़ टन अनाज उत्पादन के लक्ष्य को हासिल करने की जद्दोजहद में है परन्तु वर्ष 2015 में इसे अपनी जरूरत पूरा करने के लिऐ 25 से 26 करोड़ टन अनाज की जरूरत होगी, इसके पूरा हो पाना संदेहास्पद है। भारत वैष्विक भुखमरी सूचकांक के संदर्भ में 119 देशों की सूची में 94 वें स्थान पर आता है।

दुनिया की 27 फीसदी कुपोषित जनसंख्या केवल भारत में रहती है। कुपोषित बच्चों का दुनिया का औसत 25 फीसदी है परन्तु भारत में 43 प्रतिषत बच्चे कुपोषण के शिकार हैं।

भारत में 5 वर्ष से कम उम्र के 70 फीसद बच्चों में खून की कमी है और 80 फीसदी बच्चों को विटामिन 'ए' की खुराक नहीं मिलती है। विष्व खाद्य कार्यक्रम की ताजा रिपोर्ट बताती है कि वास्तव में खून की कमी के षिकार बच्चों की संख्या भारत में 6 प्रतिषत बढ़ गई है।

देष के 19 में से 11 राज्यों में 80 प्रतिषत से ज्यादा बच्चे एनीमिया के शिकार हैं। पिछले छह वर्षों से भारत में ऊर्जा की सतत् कमी (क्रोनिक एनर्जी डेफिषियेंसी) का प्रकोप 40 फीसदी महिलायें लगातार भोग रही हैं। इसमें कोई कमी नहीं आई। इसका मतलब यह है कि भारत का विकास आंकड़ों का मकड़जाल है। यह लोगों की जिन्दगी में बदलाव का सूचक नहीं है। इसीलिये हमें पूर्ण खाद्य सुरक्षा सुनिष्चित करने वाला कानून चाहिये।

हमारी मांग[↑]

सबके लिये खाद्य सुरक्षा

(भोजन के अधिकार के लिये)

संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की सरकार ने एक ऐसे राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून को लागू करने का कदम उठाया है जिसके तहत गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले हर परिवार को 3 रूपये प्रति किलो की दर से 25 किलो खाद्यान्न दिया जायेगा। बढ़ती हुई कीमतों, सूखे, गहराई तक जाती भुखमरी (इसमें से ज्यादातर संकट पूर्व-वर्तमान की सरकारों द्वारा अपनाई आर्थिक नीतियों के कारण पैदा हुये हैं) के संदर्भ में इस तरह का सीमित कानून निरर्थक और बेमानी है। इस कानून की कवायद ऐसे दौर में की जा रही है जब भारत दुनिया की सबसे तेज गति से प्रगति करने वाली अर्थव्यवस्था (वास्तव में रोज़गारविहीन प्रगति) में से एक मानी जाती है, परंतु इसी देश में दुनिया के सबसे ज्यादा कुपोषित बच्चे भी रहते हैं।

भारत में आज 360 अरबपति रहते हैं परंतु यहीं की 93 प्रतिशत कार्यशील जनसंख्या असंगठित क्षेत्र में है, जिन्हें रोजगार की कोई सुरक्षा प्राप्त नहीं है। यहां दिनभर की मेहनत के एवज में 25-30 रूपये की मजदूरी मिलती है परंतु अनाज की कीमतें अनियंत्रित गति से बढ़ रही हैं, पोषणयुक्त भोजन आज ज्यादातर लोगों की पहुंच से बाहर है। देश की सबसे ज्यादा जनसंख्या यानी 60 प्रतिशत लोगों को खेती से रोजगार मिलता है, फिर भी कृषि क्षेत्र गंभीर संकट के दौर से गुजर रहा है। प्रति व्यक्ति अनाज की उपलब्धता कम होती जा रही है और किसान या तो आत्महत्या करने के लिये मजबूर हैं या फिर खेती छोड़ रहे हैं। ऐसे में सूखे ने परिस्थितियों को और भी गंभीर बना दिया है। देष के 278 जिलों पर सूखे की मार पड़ी है।

रोजी-रोटी अधिकार अभियान संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन के इस तरह के प्रस्तावित राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून को खारिज करता है और सुरक्षित-पर्याप्त भोजन की उपलब्धता और पहुंच को तत्काल सुनिश्चित करने वाले कानून की मांग करता है। ऐसी नीतियों को सरकार वापस करे जिनसे भुखमरी पैदा और विकराल होती है। यह अभियान ऐसे व्यापक भोजन के अधिकार कानून की पुरजोर मांग करता है जो भुखमरी के ढांचागत कारणों को प्रभावित करे और देश के हर निवासी को खाद्य सुरक्षा के अधिकार प्रदान करे। हम आगे मांग करते हैं कि भारत सरकार अपने कानून के प्रारूप में रोजी-रोटी अधिकार अभियान द्वारा प्रस्तुत किये गये कानून के प्रारूप को शामिल करे। सरकार को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि कोई भी बच्चा, महिला या पुरूष भूखा न सोये और कुपोषण का शिकार न होने पाये।

हमारी मांगें

1. **राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा कानून लागू करें -** सभी के लिये दीर्घकालीन खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने वाले व्यापक भोजन का अधिकार कानून लागू करने की प्रक्रिया को रोकने या बाधित करने में सूखे की स्थिति को बहाने के रूप में पेष न किया जाये। इस कानून के संदर्भ में राष्ट्र स्तर पर पारदर्शी, खुली और सहभागी संवाद की प्रक्रिया चले।

[↑] **रोज़ी रोटी के अधिकार अभियान द्वारा विभिन्न जन संवादों के आधार पर यह मांग पत्र तैयार किया है.**

2- **"भोजन और खाद्यान्न पहले" की नीति का पालन हो -** घरेलू खाद्यान्न उत्पादन और उपभोग को लाभकारी बनाते हुये खेती को ताकत देना

- खेती को बचाने के लिये घरेलू खाद्यान्न उत्पादन और उपभोग को बढ़ावा देना।
- घरेलू जरूरतों को पूरा करने के लिये खाद्यान्न और अनाज के आयात-निर्यात के बजाये घरेलू अनाज के उत्पादन और उपभोग को नीतिगत प्राथमिकता दी जाये। किसानों को संरक्षण देने के लिए अनुचित रियायतों से आयात करके देश में अनाज की "अव्यवस्था" न पैदा की जाये। केवल अभाव और बेहद जरूरी परिस्थितियों में ही सरकारी उपक्रमों के जरिये अनाज का अस्थाई रूप से आयात किया जाये।
- जमीन और पानी सहित, तमाम प्राकृतिक संसाधनों का पहला उपयोग अनाज/खाद्यान्न के लिये होना चाहिये।
- खेती और सरकारी खाद्यान्न कार्यक्रमों में जीएम तकनीक के उपयोग पर सरकार प्रतिबंध रखे।
- सरकार को गेंहूं और चावल की अपेक्षा पौष्टिक और स्थानीय अनाज को ज्यादा प्राथमिकता देना चाहिये।
- किसान अनाज का उत्पादन करने में रूचि लें, इसके लिये सरकार को अनाजों के और बेहतर समर्थन मूल्य तय करना चाहिये।
- न्यूनतम समर्थन मूल्य तय करते समय किसानों और खेतीहर मजदूरों के श्रम का सम्मानजनक मूल्यांकन करते हुये जीवन जीने के लिये जरूरी मजदूरी तय ही जाना चाहिये।
- अनाज उत्पादन, अनाज के बाजार और पोषण संबंधी योजनाओं हर तरह के व्यापारिक संस्थानों के हितों (अनुबंध खेती सहित) और कार्पोरेट के प्रभाव को पूरी तरह से समाप्त किया जाना चाहिये।
- सरकार को निजी क्षेत्र के साथ ऐसा कोई भी अनुबंध या साझेदारी नहीं करना चाहिये जिसमें हितों का टकराव हो या निजी क्षेत्र अपने लाभ के लिये व्यवस्था और प्रक्रिया को प्रभावित करना चाहे।
- सरकार को यह सुनिष्चित करना चाहिये की अनाज और खाद्यान्न सामग्री की खरीदी, भण्डारण और वितरण विकेन्द्रीकृत व्यवस्था के तहत् हो।
- सरकार को सुनिश्चित करना चाहिये कि हर व्यक्ति को पीने का साफ पानी और स्वच्छता उपलब्ध हो।
- कृषि व्यापार संगठनों/कम्पनियों के द्वारा खेती और खाद्यान्न पर व्यापारिक नियंत्रण और एकाधिकार पर रोक हो।
- जब तक देश में कुपोषण खत्म न हो जाये तब तक अनाज निर्यात पर पूरा प्रतिबंध होना चाहिए।

3. सार्वजनिक वितरण प्रणाली का लोकव्यापीकरण

- देश में रहने वाले हर व्यक्ति को सार्वजनिक वितरण प्रणाली के तहत लाया जाये।
- हर वयस्क के लिये हर महीने 14 किलो अनाज, डेढ़ किलो दाल और 800 ग्राम खाने के तेल की पात्रता सुनिश्चित की जाये।

- पूरे देश में अनाज उत्पादन को बढ़ावा देने के लिये सभी जिलों में अनाज की खरीदी हो। हर विकासखण्ड (ब्लाक) में अनाज भण्डारण के लिये गोडाऊन स्थापित हो और स्थानीय उपलब्धता कम होने की स्थिति के अलावा केवल स्थानीय स्तर पर खरीदे गये अनाज का ही वितरण हो।
- हर ग्राम पंचायत के स्तर पर अनाज कोष (बैंक) की स्थापना होना होना चाहिए।
- राषन कार्ड सहित खाद्यान्न योजनाओं के सभी दस्तावेज महिलाओं के नाम पर जारी किये जायें।
- अनाज में पौष्टिक और स्थानीय अनाज शामिल होने चाहिये और 2 रूपये प्रति किलो के मान से अपलब्ध कराया जाना चाहिये। इसमें दाल की कीमत 20 रूपये और खाने के तेल का दाम 35 रूपये तय किया जाये।
- इस कानून के तहत् सार्वजनिक वितरण प्रणाली की व्यवस्था में ढांचागत बदलाव लाया जाये। इसमें पीडीएस दुकानों का निजीकरण खत्म करना, पर्याप्त पूंजी और कमीशन के साथ महिला समूहों एवं सामुदायिक समूहों को सौंपना, राशन दुकान के दरवाजे पर अनाज की पहुंच सुनिश्चित करना, कम्प्युटरीकरण करना और पारदर्शिता के लिये अन्य अनिवार्य कदम उठाना शामिल है।

4. बहिष्कृत, वंचित समूहों और आपदाओं से प्रभावितों को पेंशन, अंत्योदय कार्ड और पके हुए भोजन सहित विशेष संरक्षण

- इस कानून में और इस कानून के द्वारा वृध्दों, विकलांगों, एकल महिला-बच्चों पर निर्भर परिवारों, निराश्रितों, बंधुओं मजदूरों, पिछड़ी हुई आदिम जनजाति, विमुक्त जाति-जनजाति, शहरी आश्रयहीन और संरक्षणविहीन बच्चों को विषेष संरक्षण दिया जाना चाहिये।
- इन वर्गों से संबंधित हर व्यक्ति एवं परिवार को अंत्योदय कार्ड मिलना चाहिये और अन्य जनसंख्या की अपेक्षा सार्वजनिक वितरण प्रणाली से आधी कीमत पर अनाज मिलना चाहिये।
- इन वर्गों से संबंधित हर व्यक्ति एवं परिवार को अतिरिक्त अधिकारों की पात्रता, जैसे पका हुआ भोजन, बच्चों को आवासीय स्कूलों में प्रवेश, हर अधिकार में दो गुना आवंटन की पात्रता और एक क्विंटल मुफ्त खाद्यान्न होना चाहिये।
- पलायन करने वाले मजदूरों और शहरी निराश्रितों के लिये विशेष नीतियों का निर्माण करना चाहिये - जैसे देश के किसी भी हिस्से में अपनी खाद्यान्न की पात्रता का अधिकार उपयोग करना।
- सरकार को हर आपातकालीन परिस्थिति एवं आपदा (प्राकृतिक और इंसान द्वारा निर्मित) और भुखमरी की स्थिति में विशेष कदम उठाने की तत्परता दिखाना चाहिये।
- रसोईयों और सहायकों के कम से कम 50 प्रतिशत तक दलित, आदिवासी और मुस्लिम समुदायों से भरे जाने चाहिये।
- आंगनवाड़ी और राशन की दुकानों की स्थापना में दलित, आदिवासी और मुस्लिम बसाहटों को प्राथमिकता दी जाना चाहिये।

5. भूख से मौतें

- सभी आपातकालीन स्थितियों, आपदाओं (प्राकृतिक एवं मानव निर्मित), भुखमरी एवं भूख से मौतों की स्थिति में सरकार को ठोस एवं विशेष कदम उठाना चाहिये। जहां भी भूख से मौत की सूचना

आती है वहाँ कलेक्टर को इन समुदायों एवं परिवारों के सम्मानजनक सुरक्षित पुनर्वास के लिए तत्काल पहुंचना चाहिये। इस तरह के परिवारों की जांच के लिये कलेक्टरों को सर्वोच्च न्यायालय आयुक्तों द्वारा बनाई गई मार्ग निर्देशिका लागू करना चाहिये।

6. एक प्रभावी षिकायत निवारण व्यवस्था की स्थापना करना

- ❖ शिकायत निवारण व्यवस्था में गलत काम करने वालों के लिये अर्थदण्ड और सजा का, और जिनके साथ गलत हुआ उनके लिये मुआवजे का प्रावधान होना चाहिये।
- ❖ इसमें आपराधिक और सिविल कार्यवाही शामिल हो। इस कानून में कार्यवाही के लिये ग्राम न्यायालयों का न्यायिक क्षेत्र तय किया जाये।
- ❖ किसनों को संरक्षण देने के लिए अनुचित रियायतों से आयात करके देश में अनाज की "अव्यवस्था" न पैदा की जाये। केवल अभाव और बेहद जरूरी परिस्थितियों में ही सरकारी उपक्रमों के जरिये अनाज का अस्थाई रूप से आयात किया जाये।
- ❖ ब्लॉक और जिला स्तर पर शिकायत निवारण अधिकारियों की नियुक्ति के साथ साथ राज्य और राष्ट्र के स्तर पर स्वतंत्र आयुक्तों की नियुक्ति की जाये।
- ❖ तमाम खाद्यान्न कार्यक्रमों में पारदर्षिता के लिये ठोस ढांचा बनाया जाना चाहिये। इसके साथ ही हर स्तर पर जवाबदेहिता तय करते हुये सामाजिक अंकेक्षण के लिये आवश्यक प्रावधान किये जायें।
- ❖ इस कानून में व्यवस्था होना चाहिये कि वार्ड/ग्रामसभा या किसी भी स्थानीय निकाय के स्तर पर ही कानून के उल्लंघन एवं अधिकारों के हनन् की शिकायत दर्ज की जा सके।
- ❖ इस कानून के तहत शामिल सभी योजनाओं में काम करने वालों के लिये सम्मानजनक जीवन योग्य मजदूरी का प्रावधान सुनिश्चित किया जाना चाहिये।

7. सर्वोच्च न्यायालय के आदेशों को कमजोर न करना - भोजन का अधिकार कानून में यह सुनिष्चित किया जाना चाहिये कि भोजन के अधिकार के संदर्भ में सर्वोच्च न्यायालय के न्यूनतम कानूनी अधिकार और अन्य व्यवस्थाओं को सशक्त बनाने वाले, आदेशों को कानून के द्वारा किसी भी तरह से कमजोर न किया जाये।

8. तत्काल की कार्यवाही

अभाव और सूखे की मौजूदा परिस्थितियों में खाद्य सुरक्षा की चुनौती से निपटने के लिये -

- ❖ हर वयस्क को मांग पर रोजगार उपलब्ध होना चाहिए। सूखा प्रभावित इलाकों में नरेगा के तहत रोजगार के दिनों की संख्या सीमित न की जाये। नरेगा के अस्तित्व में होने के बाद हर सार्वजनिक निर्माण कार्य नरेगा के तहत होना चाहिये, बजाये इसके कि राहत कार्यों के लिये अलग से नई समानान्तर व्यवस्था खड़ी की जाये।
- ❖ मजदूरी में 20 प्रतिशत की वृद्वि की जाना चाहिये। मजदूरी वृध्दि पर लगी रोक को तत्काल हटाया जाना चाहिये।
- ❖ रोजगार कार्यक्रमों में वृद्वों, विकलांगों आदि की स्थिति को ध्यान में रखते हुये काम के लक्ष्य कम किये जाने चाहिये।
- ❖ मिस्त्रियों को शारीरिक श्रम आधारित काम के अलावा उनकी क्षमता का काम मिलना चाहिये।

- कार्यस्थलों पर बच्चों पर प्रतिबंध हो।
- अन्त्योदय अन्न योजना का विस्तार सभी पिछड़ी आदिम जाति परिवारों, विकलांगों, वृद्वों और अन्य वंचित समूहों तक होना चाहिये। हर पात्र तक इसकी पहुंच सुनिष्चित की जाये।
- जहां भी भूख से मौत की सूचना आती है वहाँ कलेक्टर को इन समुदायों एवं परिवारों के सम्मानजनक सुरक्षित पुनर्वास के लिए तत्काल पहुंचना चाहिये। इस तरह के परिवारों की जांच के लिये कलेक्टरों को सर्वोच्च न्यायालय आयुक्तों द्वारा बनाई गई मार्ग निर्देषिका लागू करना चाहिये।
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली की पात्रता 50 प्रतिशत बढ़ाई जाना चाहिये।
- मध्यान्ह भोजन योजना और एकीकृत बाल विकास योजना में पात्रता को दो गुना किया जाये। आंगनवाड़ी केन्द्र में दो बार भोजन दिया जाना चाहिये।
- उड़ीसा और तमिलनाडू की तर्ज पर विकलांगों वृद्वों और निराश्रितों के लिये आपातकालीन भोजन केन्द्रों की स्थापना करना।
- स्कूल से बाहर के बच्चों को मध्यान्ह भोजन योजना के तहत शामिल करना।
- छुट्टियों के दौरान मध्यान्ह भोजन योजना चलते रहना चाहिये।
- हर बसाहट तक पीने का पानी टैंकर के जरिये पहुंचना चाहिये, इसमें दलित और आदिवासी बस्तियों पर खास ध्यान देना चाहिये। पानी का संग्रहण करने वाले टैंकर भी उपलब्ध होना चाहिये।
- सभी पशुओं और जानवरों के लिये शिविरों एवं डिपो के जरिये चारे की सतत् उपलब्धता सुनिष्चित करना चाहिये।
- जो लोग खाद्यान्न/अनाज खरीदने में अक्षम हो उनके लिये हर पंचायत के स्तर पर मुफ्त खाद्यान्न/अनाज की व्यवस्था के लिये स्टॉक होना चाहिये।
- इसी तरह की प्रक्रिया बाढ़, चक्रवात, और कुपोषण से ग्रसित इलाकों के लिये भी चलाई जानी चाहिये।
- **शिकायत निवारण -** इन योजनाओं के सही क्रियान्वयन सुनिश्चित करने के लिये शिकायतों पर 48 घंटे के भीतर कार्यवाही की जाये और पंचायत एवं ब्लॉक स्तर पर जवाबदेहिता सुनिश्चित की जाये।

हमारी मांगों पर कोई बहाना नहीं

जब भी हम अपने सुनिष्चित भोजन और रोजगार के अधिकार की मांग करते हैं तो सरकार कहती है कि इन मांगों को पूरा करने के लिये उसके पास पर्याप्त धन नहीं है। बहरहाल सरकार को हमारे धन से रियायतें देकर कम्पनियों और पूंजीपतियों को फायदा पहुंचाने में कोई हिचक नहीं होती है। केवल बीते साल में ही अमीरों के 4,18,096 करोड़ रूपये के कर माफ कर दिये गये जबकि हर साल 1 लाख करोड़ रूपये की टैक्स चोरी होती है। इनकी तुलना में सरकार नरेगा के लिये केवल 39,000 करोड़ और सस्ते अनाज के लिये केवल 55,000 करोड़ रूपये आवंटित करती है। कई लाख करोड़ रूपये स्विस बैंक में पड़े हुये हैं; जबकि कई करोड़ रूपये राष्ट्रमण्डल खेलों जैसी बनावटी और गैर-जरूरी योजनाओं में डाले जा रहे हैं और गरीबों के पेट खाली हैं।

भूख़ के साथ जीना

तुम्हारी आखों ने यह तो देख ही लिया
उसने बेहद तल्ख़ अंदाज़ में दो तमाचे मार कर
अपने बच्चे को सोने के लिए कर दिया मजबूर
और बन गई अपराधी समाज कि,
यह समाज न समझ पाया कभी भी
कि भूखे बच्चों को सुलाने के लिए
बहुत सी माओं के पास रोटी नहीं होती!
तुम बात करते रहे सभ्यता की
पर तुम क्यों नहीं पढ़ पाये
उनकी जिन्दगी का पहला अध्याय
जिसमे हर बच्चे को सिखाया जाता है भूख़ के साथ जीना,
कचरे के डिब्बों में बिखरे अन्न के टुकड़ों
और गोबर के साथ गाय के पेट से निकल आये
ज्वार के दानों को बीन कर
अपनी थाली सजाते रहे हैं वो,
और अपनी जिन्दगी को कल के सूरज तक
खींचने की कोशिश करने वाले
उन हाथों को नहीं ले पाये तुम अपने हाथों में,
तुम्हारी आँखों ने देखे हैं बड़े-बड़े सपने
पर तुम यह क्यों न देख पाये उस बच्चे को
लार गलाकर रोटला निगलने की कोशिश करते,
तुम अगर यह देख पाते तो न करते
भूख़ को नापने के सूचकों की खोज !!